भूमिका

झारखण्ड, बंगाल तथा उड़ीसा के सीमावर्ती इलाकों में छऊ नृत्य नाटक का विकास हुआ, जो तीन रूपों में अपने स्थानीय नामों से जाना जाता हैं, सरायकेला छऊ, मयूरभंज छऊ तथा पुरुलिया छऊ। इन तीनों छाऊ रूपों के एक ही नाम होने का कारण इनकी ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि रही है। सरायकेला छऊ तथा मयूरभंज छऊ जहाँ छोटे-छोटे राज्यों के राजपरिवारों द्वारा दिये गए प्रश्रय से संबन्धित हैं तो पुरुलिया का इतिहास किसी राज परिवार से संबन्धित न होकर पुरालिया के जनमानस के संरक्षण में फली। यह तीनों अपने देशगत सीमाओं के समीपवर्ती रहे हैं, जो इन तीनों के एक ही स्वरूप होने का कारण हैं। फिर भी तीनों रूपों में पर्याप्त भिन्नता है। सरायकेला के निवासी सरायकेला छऊ से ही अन्य दोनों छऊ का उद्भव मानते हैं। जो इसके ऐतिहासिक साक्ष्यों के प्रमाण से सही भी है। सरायकेला छऊ नृत्य-नाट्य की परम्परा कब और कैसे शुरू हुई इसको लेकर विद्वानों में मतभेद है। लेकिन अधिकतर मत इसके सरायकेला की राजसेना की छावनियों से मानते हैं क्योंकि यह नृत्य मूलतः सैनिक वर्ग ही करता था तथा इस नृत्य की उत्पत्ति इस सेना में प्रचलित परिखंडा नृत्य से माना जाता है। लेकिन इस नृत्य में शास्त्रीय परम्परा का प्रयोग अत्यधिक रूप से किया जाता है, जिसमें भरत के नाट्यशास्त्र की पद्धति यां मुख्य रूप से व्यवहार में लाई जाती हैं।

भरत द्वारा विरचित नाट्यशास्त्र नाट्यकला का मूलग्रंथ भी है और प्राचीन भी जिसमें रंगमंच से संबन्धित सभी बिन्दुओं पर विचार किया गया है इसके अतिरिक्त नाट्यकला के आनुषंगिक विषयों जैसे-काव्य, संगीत, नृत्य, शिल्प तथा अन्य ललित-कलाओं का भी कोष है। इस ग्रंथ ने भारत की रंगमंचीय कला को शताब्दियों से प्रभावित कर रखा है। क्योंकि इस अकेले ग्रंथ में नाट्य-विषयक विवरण जितनी समग्रता के साथ प्रस्तुत हुआ है वह किसी अन्य उत्तरकालीन

भारतीय ग्रंथ में नही मिलता है। इसके रचना के समय काल के निर्धारण में भी विद्वानों में मतभेद है। फिर भी विद्वानों ने दो सौ ईसा पूर्व से तीन सौ ईसवी के बाद के बीच इसकी रचना का समय-काल माना है। नाट्यशास्त्र का परवर्ती कलारूपों पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा जिसमें कूडियाट्टम और अंकिया नाट, जैसे काला-रूप आते हैं। इसी शृंखला में सरायकेला का छऊ नृत्य-नाट्य भी आता हैं, जिसपर नाट्यशास्त्रीय पद्धति का अत्यधिक प्रभाव जान पड़ता है। जब कि यह कला रूप भारतीय रंग परिदृश्य पर लोक नृत्य-नाट्य के रूप में जाना जाता है। लेकिन कुछ रंग चिंतकों का मानना है कि सरायकेला छऊ के इस नृत्य नाट्य परम्परा में आचार्यों या गुरुओं द्वारा प्रयोग की जाने वाली 'भंगी' जिसके अंतर्गत टोपका, उफली तथा चालि आदि आते हैं । इन भंगी की तुलना भरतनाट्यम और अन्य शास्त्रीय नृत्य शैलियों की प्राथमिक लय व भंगिमाओं से की जा सकती है । इसमें किए जाने वाले अभिनय की गतियों और भंगिमाओं आदि को नाट्यशास्त्र कि गतियों व भंगिमाओं (करणों) के समरूप रखा जा सकता है। कपिला वात्स्यायन का भी कहना है कि "सेरायकला छऊ में हरिणदिया को अभिनीत करते समय बाघ पाणिखिआ किया जाता है उसमें टाँगों का विस्तार नाट्यशास्त्र के वृश्चिककरण का परिवर्तित रूप है तथा इसमें प्रयोग होने वाले टोपका (चालियां) को नाट्यशास्त्र और अभिनयदर्पण की गतियों के समतुल्य माना जा सकता है।"[1] (जो इस शोध का मुख्य विषय है।) इन विवेचनाओं से स्पष्ट होता है कि यह नृत्य-नाट्य भरत के नाट्यशास्त्रीय तथा पद्धतिबद्ध अभिनय के दायरे में आता है। भरत के अभिनय पद्धति और सरायकेला छऊ के अन्तः सम्बन्धों पर प्रश्न उठता है कि भरत के अभिनय पद्धति का सम्बंध इस कला-रूप में किस-किस तरह तथा किन-किन रूपों में परिलक्षित होता है। इन्हीं प्रश्नों का उत्तर इस शोध का विषय है।

[1] वात्स्यायन कपिला, अनुवाद- बदिउज्ज़मा, पारंपरिक भारतीय रंगमंच अनंत धाराएं,1995,नेशनल बुक ट्रस्ट,नयी दिल्ली

प्रस्तुत शोध में सरायकेला छऊ कि परम्परा, अनुष्ठान, छऊ का उद्भव और इसके स्वरूप पर शोधपरक चर्चा की गई है। भरत की अभिनय पद्धति को रखते हुए सरायकेला छऊ की अभिनय पद्धति पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही इसके कलाकारों तथा गुरुओं कि चर्चा करते हुए , भरत के चतुर्दिक अभिनय में से आंगिक तथा आहार्य अभिनय को आधार बनाते हुए आंगिक तथा आहार्य अभिनय पर आधारित सरायकेला छऊ तथा भरत के शास्त्रीय अभिनय पद्धति के अन्तः सम्बन्धों को खोजने कि कोशिश कि गई है।

सम्पूर्ण शोध को पाँच भागों में विभक्त किया गया है।

भरत मुनि प्रतिपादित अभिनय सिद्धान्त : इसमें भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के द्वारा दी गई अभिनय कि व्याख्या को रखते हुए, आचार्य भरत द्वारा नाट्यशास्त्र में दिये गए अभिनय कि व्याख्या तथा चारों प्रकार के अभिनय पद्धति का उल्लेख किया गया है।

सरायकेला छऊ परम्परा, अनुष्ठान एंव स्वरूप : इसमें सरायकेला स्टेट कि ऐतिहासिक पृष्ठ को बताते हुए , छऊ शब्द कि उत्पत्ति तथा छऊ नृत्य के उद्भव का वर्णन किया गया है। सरायकेला छऊ कि परम्परा व उसमें किए जाने वाले अनुष्ठान तथा कर्मकांडो का नाट्यशास्त्र में किए जाने वाले कर्मकांडों से साम्य रखने वाली विधियों का विवेचन किया गया है। तथा सरायकेला छऊ के स्वरूप कि चर्चा की गई है।

सरायकेला छऊ के प्रमुख अखाड़े, गुरु, एंव कलाकार : इसमें सरायकेला छऊ के प्रमुख अखाड़ों के नामों कि चर्चा करते हुए , इन अखाड़ों से जुड़े गुरुओं के नाम तथा उनका लघु परिचय देते हुए उनके द्वारा किए गए कामों का उल्लेख किया गया है। तथा अभी जो प्रमुख सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थान जिसमें छऊ नृत्य का प्रशिक्षण दिया जाता है उनके नामों के साथ कुछ कलाकारों के नाम दिये गए हैं।

सरायकेला छऊ में अभिनय : इसमें सरायकेला छऊ कि अभिनय पद्धति का उल्लेख करते हुए, आंगिक अभिनय के अंतर्गत सरायकेला छऊ कि तकनीक चारी, उफली तथा टोपका कि चर्चा कि गई है। तथा आहार्य अभिनय के तहत मुखौटे, वस्त्राभूषण व रंगसामग्री की विवेचना कि गई है।

भरत द्वारा प्रतिपादित अभिनय पद्धति एंव सरायकेला छऊ की अभिनय पद्धति के अन्तः संबन्धों का विश्लेषण : इसमें भरत के आंगिक अभिनय में प्रयोग होने वाली चारी, मण्डल, स्थान, करण तथा गतियों का सरायकेला छऊ के आंगिक में होने वाली चारी, उफली, टोपका, भंगिमा तथा गतियों के अन्तः सम्बन्धों का मूल्यांकन किया गया है। तथा भरत आहार्य अभिनय तथा सरायकेला छऊ के आहार्य अभिनय में प्रयुक्त होने वाली शास्त्रीय पद्धतियों के अन्तः सम्बन्धों को विवेचित किया गया है। और अंत में **उपसंहार** दिया गया है।

शोध में क्षेत्र सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया । साथ ही प्राथमिक तथा द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग करते हुए वर्णनात्मक तथा विश्लेषणात्मक विधि का सहारा लिया गया है।

उपसंहार

सरायकेला छऊ नृत्य नाट्य की परम्परा पर भरत के नाट्यशास्त्र के प्रभावों को साफ देखा जा सकता है, जिसमें सर्वप्रथम इसमें होने वाले अनुष्ठान को लें तो इसकी विधियों में स्थानीय कर्मकांडों के साथ-साथ नाट्यशास्त्र में वर्णित अनुष्ठान की प्रक्रिया का भी अनुसरणमिलता हैं। इसके अनुष्ठान में पहले दिन निकलने वाले जुलूस में खम्भा गाड़ने की विधि का निर्वाह किया जाता है, जिसे जर्जरा कहते हैं उसकी पूजा आदि कर के इसकी स्थापना की जाती है। । यह विधि नाट्यशास्त्र में समान रूप से मिलती है। यहाँ तक की दोनों के नाम तथा दोनों के काम के अर्थ समान हैं। नाट्यशास्त्र में भरत कहते हैं –

सम्पूज्य सर्वानेकत्र कुतपं सम्प्रयुज्य च।
जर्जराय प्रयुञ्जीत पूजां नाट्यप्रसिद्धये॥[1]

अर्थात- 'तब सभी देवताओं का एकसाथ पूजन कर वाद्यों का प्रयोग करें और तब नाट्य की सफलता के लिए जर्जर की पूजा करें' यहाँ भरत जर्जर की स्थापन नाट्य में होने वाले प्रकृतिक, दैविक तथा दानवी विघ्नों से नाट्य को बचाने के लिए करते हैं। जर्जर इन्द्र देव के द्वारा दिया गया अस्त्र था जो दैत्यों के द्वारा किए जाने वाले विघ्नों से नाट्य प्रदर्शन की रक्षा करता है। सरायकेला छऊ के अनुष्ठान में भी इस जर्जरा की समुन्नत परंपरा का निर्वाह किया जाता है। इस अनुष्ठान में जर्जरा को जुलूस के साथ यज्ञघाट से निकालते हुए राजमहल तथा राजमहल से छऊ नृत्य के प्रदर्शन स्थल ले जया जाता है, जिसे आखाड़ा कहा जाता है। जहां इसकी पूजा आदि करके, जर्जरा के द्वारा होने वाली रक्षा की भावना से इसकी स्थापना की जाती है। नाट्यशास्त्र के प्रभाव

[1] शास्त्री, बाबूलाल शुक्ल, हिन्दी नाट्यशास्त्र, तीसरा अध्याय, प्रथम भाग, पृ. 63

काल से लेकर सरायकेला छऊ की परम्परा तक आते-आते इसके नाम में सिर्फ जर्जर से जर्जरा तक का ही बदलाव दिखता है। तथा सरायकेला के स्थानीय विशेषता व कर्मकांड भी शामिल हैं लेकिन दोनों की परिणति एक ही भावना की ध्योतक है, जो सरायकेला छऊ नृत्य के इस विधि का नाट्यशास्त्र से सम्बन्धों को स्पष्ट करती है।

सरायकेला छऊ के आंगिक अभिनय की पद्धति शास्त्रीयता लिए हुए है। भरत जिस तरह से नाट्यशास्त्र में वर्णित चारी, स्थान, मण्डल तथा करण को युद्ध व नृत्य से संबन्धित करते हैं ठीक उसी तरह सरायकेला छऊ में कुछ भिन्नता के साथ होने वाले युद्ध कला व नृत्य का यह उफली, चारी तथा टोपका आधार है। और इन दोनों ही प्रविधियों में व्यवहरित की जाने वाली भंगिमा व गतियों का कपिला जी के अनुसार अत्यधिक साम्य है। नाट्यशास्त्र में बताए गए युद्धादी दृश्यों के लिए भरत जिन गतियों, चारीयों तथा स्थान की विवेचना करते हैं। ऐसी गति तथा युद्ध कला से संबन्धित विधियाँ जो अन्य शास्त्रीय युद्ध कला रूपों कथकली, कलरीपयत्तु आदि युद्ध नृत्यों में मिलते हैं उसी तरह सरायकेला छऊ की आधार चारी, उफली, टोपका, भंगिमा तथा गतियों में शास्त्रीय पद्धतियों का समावेश मिलता है। छऊ की 36 उफलीयां जिनमें नाट्यशास्त्र की चारी की तरह 18 भौमि तथा 18 अकाशिकी उफलियों में विभक्त है, तो पुरूष तथा स्त्री पात्रों के द्वारा किए जाने वाले उफली, जो नाट्यशास्त्र के तांडव तथा लास्य से सादृश्यता रखती है। बाहा माटा, गोबर खंदा या गोबर घुला जैसी उफलियों को नाट्यशास्त्र की वैशख्य स्थानक, तथा अलीढ़ व प्रत्यालीढ़ चरियों के रूप में पहचाना जा सकता है। तो हरिण देंगा, पारामुड़ा, सिंदूर देंगा, जैसी उफलियाँ नाट्यशास्त्र की वृश्चिकरेचितम, वृश्चिककुट्टितम तथा ललाटतिलकम जैसे करणों के परवर्तित रूप ही जान पड़ते हैं। छऊ के टोपकों की प्रारम्भिक स्थितियां भरतनाट्यम, ओडिसी तथा मणिपुरी जैसे शास्त्रीय नृत्यों के प्राथमिक लय इकाइयों से समानता रखती हैं। जो इसके आंगिक अभिनय को नाट्यशास्त्रीय परंपरा की कतार में लाकर खड़ा करता है। इसकी

संगीत तथा ताल पद्धति, जिसमें संगीतवाद्यों की उचित व्यवस्था, संगीतज्ञों के लिए निर्दिष्ट स्थान, संगीत का प्रारम्भ, वाद्य-यंत्रों का समुचित पर्वेक्षण, संगीत के वाद्य-यंत्रों को व्यवहार में लाने के निश्चित नियम तथा उन्नत ताल पद्धति जिसमें सुरफक, दादरा, त्रिताल, झपताल, जटताल जैसे तालों की शास्त्रीय पद्धति से निर्वाह किया जाता है।

सरायकेला छऊ में प्रयोग होने वाले मुखौटे रसों का आधार होता है, जिसपर कथानक में जिस रस की प्रधानता रहती है, उसी रस को मुखौटे पर आरोपित किया जाता है तथा नर्तक मुखौटे पर आरोपित रस के अनुसार ही नृत्य की भंगिमा की सर्जना करता है। कथानक का रस मुखौटे पर आरोपित होने के कारण नर्तक संचारी भावों को अपनी गतियों तथा चेष्टाकृत अभिनय से कथ्य के विभिन्न भावों की भावाभिव्यक्ति करता है। भरत नाट्यशास्त्र में आहार्य अभिनय के चौथे प्रकार सज्जीव की व्याख्या करते हुवे मुखौटे के प्रयोग के बाद अभिनेता किस तरह से चेष्टाकृत अभिनय का निर्वाह करे इसकी विवेचना की है, जो सरायकेला छऊ में मुखौटे के साथ अभिनय की सादृश्यता लिए हुए है।

इन प्राप्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है। कि सरायकेला छऊ कि परंपरा अनुष्ठान तथा इसके आंगिक अभिनय और आहार्य अभिनय में प्रयोग होने वाले घटकों का नाट्यशास्त्र के अभिनय पद्धति से सम्बंध रहा है, जो कालांतर में यह पद्धतियाँ सरायकेला के स्थानीय कला रूपों से साम्य होने पर भी अपने स्वरूप में आज भी कुछ परिवर्तन के साथ उपस्थित है, जिसके नाम भले ही बदल गए हैं लेकिन अर्थ और उनकी अभिव्यंजना एक ही है।

परिशिष्ट

सरायकेला छऊ के प्रदर्शनों व छऊ में प्रयोग होने वाले व्यायाम, चारी, भंगी तथा उफलियों के कुछ चित्र

नाविक नृत्य

सागर नृत्य

मयूर नृत्य

रात्री नृत्य

हर पार्वती नृत्य

महिषासुर वध

राधाकृषण नृत्य

वासुकी-गरुड़ नृत्य

चन्द्रभागा

आर्तव नृत्य

ऋष्य श्रृंग नृत्य

आरती नृत्य

सरायकेला छऊ में प्रयोग होने वाले व्यायाम, चारी, भंगी व उफलियों के चित्र

प्रणाम

आकाश चारी

मयूर गति

हस्ति गति

झुमतिया मजा

सर्प गति

गोटी फिंगा

पाहु मजा

छेली देंगा

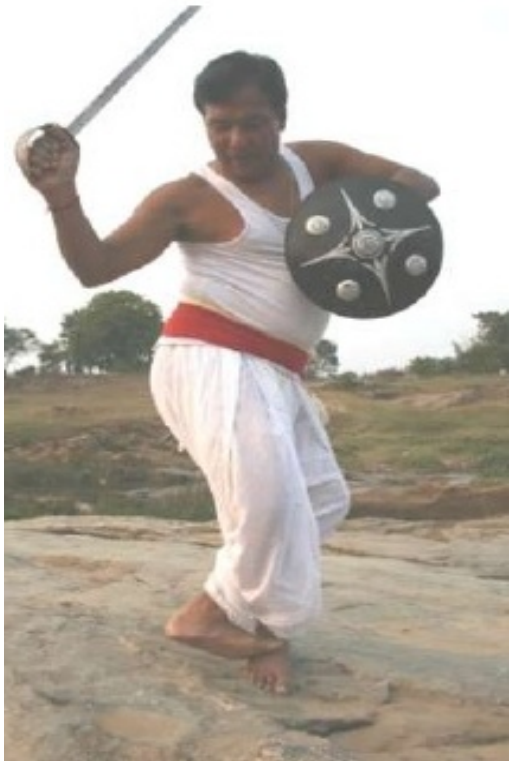

बागदुमका

हंस गति

तारा खोंसा

चंद्रमुख भंगी

लज्जा भंगी

खदूमजा

थुर-थुरी

बोध उफली

गधा बार

छोड़ा दिया

गोबर घुला

संदर्भ सूची

1. अंकुर, देवेन्द्र राज, रंगमंच का सौंदर्यशास्त्र, वाणी,2004
2. आचार्य शारदातनय, भाव प्रकाशन, डॉ॰ मदनमोहन अग्रवाल, राधाकृष्ण जनरल स्टोर, मथुरा, प्रथम संस्कारण 1978
3. गैरोला, वाचस्पति, भारतीय नाट्य परम्परा और अभिनयदर्पण, 1967,संवर्तिका प्रकाशन, इलाहाबाद
4. जैन, नेमिचन्द्र, दृश्य अदृश्य, वाणी,
5. त्रिपाठी, राधाबल्लभ, संक्षिप्तनाट्यशास्त्रम, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
6. दुबे, श्यामसुन्दर लोक परम्परा :, पहचान एवं प्रवाह, 2003, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड , जगतपुरी दिल्ली।
7. द्विवेदी, डॉ॰ भारतेन्दु, नाट्यशास्त्र में आंगिक अभिनय, विश्वभारती अनुसंधान परिषद ज्ञानपुर (वाराणसी),1990
8. द्विवेदी, पारसनाथ नाट्यशास्त्रम :,1992 ,सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी
9. धनंजय, दशरुपकम, संपा॰ भोलाशंकर व्यास, चौखंभा विद्याभवन, वाराणसी, 1967
10. बख्शी, डॉ॰ कु॰ ज्योति, कत्थक भाव पक्ष के सृजनात्मक आयाम, 148
11. भारती, ओमप्रकाश, लोकायन,लोककला रूपों पर एकाग्र, धरोहर, साहिबाबाद उत्तर प्रदेश 2007
12. मिथ ऑव दी इटर्नल : मिर्सिया इलियड,

13. मिथक एक अनुशीलन, मालती सिंह, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1988)

14. मिश्र, डाभरत और उनका नाट्यशास्त्र : ब्रजवल्लभ .,1988 ,उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद

15. रामचन्द्र-गुणचन्द्र, नाट्यदर्पण, गायकवाड़ ओ॰ सि॰, बड़ौदा 1929

16. विश्व का प्रथम मानव-मूल्य-परक शब्दावली का विश्वकोश (खण्ड तृतीय), सां॰ साहित्य शिरोमणि डॉ॰ धर्मपाल मैनी, भारतीय संस्कृति संस्थान, चंडीगढ़, सरूप एण्ड संज़ नई दिल्ली

17. विश्वनाथ, साहित्य-दर्पण, संपा॰ दुर्गा प्रसाद द्विवेदीए निर्णय सागर प्रेस, मुंबई, 1931

18. विष्णुधर्मोत्तरपुराण, (खण्ड 3 भाग 1), संपा॰ प्रियबाला शाह, गायकवाड़ ओ॰ सि॰, बड़ौदा 1958

19. वेदव्यास, अग्निपुराणम, संपा॰ मनसुखरायमोर, गुरुमण्डल प्रकाशन कलकत्ता, प्रथम संस्करण 1957

20. वेस्टल, थियोडोर एमद छऊ डांस आफ इंडिया:,1970 , नई दिल्ली

21. शर्मा, गौरीशंकर, छऊ-नृत्य (सेराएकला का आंचलिक नृत्य), 1964 संगीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली

22. शास्त्री, बाबूलाल शुक्ल, हिन्दी नाट्यशास्त्र, (चारों भाग) reprint 2009 चौखंभा प्रकाशन

23. सागरनन्दी, नाट्यलक्षणरत्नकोश, संपा॰ बाबूलाल शुक्ल, चौखम्बा संस्कृत सिरीज, वाराणसी, प्रथम संस्कारण 1974

24. सरायकेला छऊ नृत्य महोत्सव 2011, स्मारिका, श्री कलापीठ सेराकेला

25. Deo, Singh Jugabhanu, Chhau MaskDance of Seraikella, Seraikella, 1937.

26. Deo, Singh Tikayat Nrupendra Narayan, Singhuma,Seraikella and Kharsawan through the Ages, Seraikella, 1937

27. Indian Theatre: tradition of performance, Edit. By Farley P. Richmond, first Indian Edition, Delhi,1993

28. Lenka, Bhagavat Prasad, CHHAU THE SHINING ORNAMENT OF EASTERN ART & CULTURE, rajashree prakashan, mayurbhanj orissa,

29. Lmperial Gazetteer2 of India, Volume 22, Digital South Asia Library' Dsal.uchicago.edu. Retrieved 2012-07-11

30. Nicholas Abercrombic, et al., The Penguln Dictionary of soclology, Penguin Books, London, 1994

31. Vatsyayan, kapila, Traditional Indian Theatre, new Delhi, 1995

पत्रिका / जर्नल

32. छायानट, अंक 24 संगीत नाटक अकादमी, लखनऊ

33. रंगप्रसंग, अंक 16, संपा॰ अनुपम खेर, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली, 2004

34. चौमासा, (सम्पादक) कपिल तिवारी, मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद, अंक 54, 2000-2001